'बृहदारण्यकोपनिषद्' में वर्णित ब्रह्मतत्त्व चिंतन

Dr. Nayana C. Patel
Associate Professor in Sanskrit
Smt.B. V. Dhanak College, Bagasara

दार्शनिक ग्रन्थों के रूप में उपनिषदें विश्व की श्रेष्ठतम रचनाएँ मानी जाती हैं। इन्होंने भारतीय संस्कृति के विकास में काफी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। भारत के सभी दार्शनिक सम्प्रदायों के मूल विचारों पर उपनिषदों का प्रभाव स्पष्टतः दृष्टिगत होता है। भारतीय दर्शन के विभिन्न सम्प्रदायों का स्रोत उपनिषद् है। न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, अद्वैत एवं विशिष्टाद्वैत वेदान्त आदि आस्तिक मत तथा जैन और बौद्ध आदि नास्तिक मत के प्रायः सभी मुख्य सिद्धांत उपनिषदों में निहित हैं। उपनिषदों ने आत्मा, ब्रह्म और जगत के सम्बन्ध को पहली बार गहराई से खोला। उपनिषदें कर्मकाण्ड से ऊपर उठाकर आत्मज्ञान और मोक्ष का मार्ग दिखाती हैं। वेद कर्म सिखाते हैं, उपनिषदें ज्ञान सिखातीं हैं। कर्म से संसार चलता है, ज्ञान से बंधन टूटता है। इसलिए उपनिषदों को "ज्ञानकाण्ड" कहा जाता है।

भारतीय दर्शन में उपनिषद् का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रायः आस्तिक दर्शन या नास्तिक दर्शन ने किसी-न-किसी रूप में मानवमात्र को प्रभावित किया है। उपनिषदों से न केवल भारतीय दर्शन वरन् हिन्दू धर्म भी अत्यन्त प्रभावित है। श्रीमद् भगवद्गीता जैसा हिन्दुओं का ग्रन्थ तो उपनिषदों से इतनी मात्रा में प्रभावित है कि इसे उपनिषदों का निचोड़ कह दिया जाता है। इन उपनिषद-ग्रन्थों में आवश्यकता से अधिक संख्या में गूढ़ विचार भरे हुए हैं; अत्यधिक संख्या में सम्भावित अर्थ भरे पड़े हैं; ये कल्पनाओं और वितर्कों की समृद्ध खान हैं; इसलिए यह आसानी से समझा जा सकता है कि किस प्रकार भिन्न उपनिषदें एक ही उद्गम स्थान से प्रेरणा प्राप्त कर सकी होंगी। उपनिषदों के गंभीर अध्ययन से इतना तो पता चल ही जाता है कि यह हम भारतीयों की अमूल्य धरोहर है, इसका समुचित अध्ययन व प्रयोग हमें जीने की कला सिखाती है।

उपनिषदों के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए डॉ०राधाकृष्न ने कहा है- "उपनिषदें अपनी स्थापनाओं को आध्यात्मिक अनुभूति पर आधारित करती हैं, इसलिए वे हमारे लिए अमूल्य हैं, क्योंकि आस्था के परम्परागत अवलम्ब अचूक शास्त्र, दैवी चमत्कार और भविष्यवाणी आदि-आज उपलब्ध नहीं हैं। आज जो धर्मविमुखता है, वह बहुत हद तक आध्यात्मिक जीवन पर धार्मिक रीति-पद्धति के हावी हो जाने का परिणाम है। उपनिषदों के अध्ययन से धर्म के उन मूल तत्त्वों को, जिनके बिना धर्म का कोई अर्थ ही नहीं रहता, सत्य के रूप में पुनः प्रतिष्ठित करने में सहायता मिल सकती है। इसके अतिरिक्त, एक ऐसे समय में जब नैतिक आक्रमण लोगों को विचित्र जीवन प्रणालियों के आगे आत्म समर्पण करने को बाध्य कर रहा है, जब प्राणों और यातना की भारी कीमत चुकाकर सामाजिक ढाँचे और राजनीतिक संगठन में विराट प्रयोग किए जा रहे हैं, जब हम हतबुद्धि और भ्रान्त होकर भविष्य के सम्मुख खड़े हैं और हमें राह दिखाने वाला कोई स्पष्ट प्रकाश नहीं है, तब मानव-आत्मा की शक्ति ही एकमात्र शरण रह जाती है। यदि हम उसी के द्वारा शासित होने का संकल्प कर लें, तो हमारी सभ्यता अपने सबसे शानदार युग में प्रवेश कर सकती है।"[1]

बृहदारण्यक उपनिषद अपने नाम के मुताबिक़ आकार-प्रकार में सबसे बड़ा और गहरा है। बृहत् + आरण्यक = जनागल में पढ़ा जानेवाला विशाल ग्रन्थ। इसमें 'ब्रह्म' को तर्क, संवाद और अनुभव के द्वारा समझाया गया है। उपनिषदों में 'ब्रह्मन्' शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है और गौण मुख्य भेद से भी बहुधा प्रयोग हुए हैं। यह 'ब्रह्मन्' नकारान्त शब्द है। पुल्लिंग में इसीको 'ब्रह्मा' और नपुसक में ब्रह्म कहते हैं। आजकल की भाषा में 'ब्रह्म' ईश्वर (परमात्मा) और 'ब्रह्मा' त्रिदेव में से एक देव का नाम प्रसिद्ध है और ऋत्विकों में से एक ऋत्विक् का नाम 'ब्रह्मा' होता है। यह स्मरण रखना चाहिए कि ब्रह्मा व ब्रह्म दोनों एक तत्त्व है, केवल लिंग का भेद है। उपनिषदों के परिप्रेक्ष्य में ब्रह्म का तात्पर्य परमतत्त्व, परमज्योति, चरम सत्य, मूलतत्त्व आदि

एक ही तत्त्व के द्योतक शब्द हैं। जगत् के मूल में ब्रह्म ही है। वह न केवल जड़ जगत् का वरन्, चेतन आत्मा का भी आधार है। ब्रह्म 'सत्यस्य सत्यम्' और 'ज्योतिषाम् ज्योति' है। उपनिषदों में इस ब्रह्म की परमतत्त्व की जिज्ञासा जगह-जगह पर देखी जा सकती है। उपनिषद् के ऋषि बार-बार यही प्रश्न उठाते हैं कि वह कौन-सा तत्त्व है जिसको जान लेने से सब कुछ जान लिया जाता है। जिससे सम्पूर्ण संसार उत्पन्न होता है, जिसमें स्थित रहता है तथा अंततः जिसमें लय को प्राप्त होता है, वह कौन-सा तत्त्व है ? वह कौन-सी शक्ति है ? जिसके कारण हमारी सभी कर्मेन्द्रियाँ काम करती हैं? इस तरह के सर्वशक्तिमान परमतत्त्व की खोज वैदिक संहिता एवं ब्राह्मणों के ऋषियों ने कर ही दी थी, परन्तु उपनिषद् के ऋषि इस अधीश्वर-परमतत्त्व की विवेचना में पूर्ण ध्यान लगाते दृष्टिगत होते हैं।

उपनिषदों में वर्णित ब्रह्म के मुख्यतः दो रूप दृष्टिगत होते हैं, यथा-

(१) पर ब्रह्म,

(२) अपर ब्रह्म।

पर ब्रह्म असीम, निर्गुण, निर्विशेष, निष्प्रपञ्च, अमूर्त, स्थिर है; जबकि अपर ब्रह्म ससीम, सगुण, सप्रपञ्च, मूर्त, अस्थिर है। पर ब्रह्म को 'नेति नेति' कहकर पुकारा गया है, जबकि अपर ब्रह्म को 'इति इति' कहकर पुकारा गया है। पर ब्रह्म निर्गुण होने के कारण उपासना का विषय नहीं है, लेकिन अपर ब्रह्म सगुण होने के कारण उपासना का विषय है। पर ब्रह्म को 'ब्रह्म' (Absolute) और अपर ब्रह्म को 'ईश्वर' (God) कहा गया है। मूलतः पर ब्रह्म व अपर ब्रह्म दोनों एक ही ब्रह्म के दो पक्ष हैं।

उपनिषदों के अनुसार ब्रह्म सत् स्वरूप है। वह सर्वव्यापी, नित्य, अनन्त और शुद्ध चैतन्य है। उसी से इस जगत् की उत्पत्ति हुई है, उसी से इसमें स्थिरता है और यह उसमें ही विलय हो जाता है। संपूर्ण प्रकृति और प्राकृतिक शक्तियाँ उसी का अंश मात्र है। वह सत्य और अनन्त है। वह शब्द, स्पर्श, रूप आदि से रहित, अक्षय, अरस, नित्य और गन्धरहित है। वह आदि-अंतहीन और ध्रुव है। इस नाना रूपात्मक जगत् के पहले सत् शब्द वाच्य, अव्याकृत, ब्रह्मरूप ही था। वह एकमात्र अद्वितीय था; अर्थात् सजातीय, सर्वगत तथा विजातीय भेदों से रहित था। यह विश्व ब्रह्म ही है। यह सब कुछ आत्मा ही है। सब प्राणियों के भीतर वही छिपा है, वह ब्रह्म तू ही है।

बृहदारण्यकोपनिषद में ब्रह्म के दो सिद्धांतों का वर्णन किया गया है। ये दो रूप हैं-मूर्त और अमूर्त, मर्त्य और अमृत, स्थित और यत् (चर) तथा सत् और त्यत्। पंचभूतजनित देह और इन्द्रियों से सम्बद्ध ब्रह्म दो रूपों वाला है। ब्रह्म समस्त उपाधि विशेषों से रहित, सम्यग्ज्ञान का विषय, अजन्मा, अजर, अमर, अभय, वाणी और मन का भी अविषय है तथा अद्वैत होने के कारण उसे 'नेति-नेति' कहा जाता है, यथा-'सा वा एष महानज आत्माजरोऽमरोऽमृतोऽभयो ब्रह्माभयं वै ब्रह्माभयं हि वै ब्रह्म भवति य एवं वेद।"[2]

माण्डूक्योपनिषद् में बताया गया है कि यह (ब्रह्म) सर्वेश्वर हैं। वे सर्वज्ञ हैं। वे सबके अन्तर्यामी हैं। ये ही सम्पूर्ण जगत के कारण हैं। प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के स्थान भी ये ही हैं।[3] प्रश्नोपनिषद् में ओंकार के माध्यम से इस परब्रह्म की व्याख्या की गई है। 'ओम्' और 'परब्रह्म' की एकता प्रस्थापित करते हुए स्पष्ट किया गया है कि ॐ और लक्ष्यभूत परब्रह्म परमेश्वर से भिन्न नहीं है। इसलिए यही परब्रह्म है और यही उन परब्रह्म से प्रकट हुआ उनका विराट-स्वरूप-अपर ब्रह्म भी है। इस प्रकार का ज्ञान रखने वाला मनुष्य इस एक ही अवलम्ब (प्रणवमात्र के चिन्तन से) अपर और परब्रह्म में से किसी एक का अनुसरण करता है।[4]

बृहदारण्यकोपनिषद में ब्रह्म के विभिन्न प्रकार मिलते हैं। ब्रह्म को सच्चीदानंद एवं परमज्योतिः स्वरूप है। उपनिषदों के अनुसार ब्रह्म देश एवं काल की सीमा से अतीत एक असीम एवं परब्रह्म तत्त्व है। ब्रह्म के जिस मूर्त एवं निर्गुण स्वरूप की प्रस्तुति मिलती है, वह भी ब्रह्म के सगुण एवं निर्गुण स्वरूप की ही प्रतिष्ठा है। इस उपनिषद में नकारात्मक शैली 'नेति नेति' के रूप में ब्रह्म के स्वरूप का प्रतिपादन भी महत्त्वपूर्ण है। नकारात्मक शैली के द्वारा याज्ञवल्क्य ब्रह्म के स्वरूप का आत्म रूप से प्रतिपादन करते हुए कहते हैं कि आत्मा 'नेति नेति' करके अग्राह्य है। आत्मा अशीर्य, असंग

एवं अबद्ध है। न वह जीर्ण हो सकता है न किसी में असक्त, न वह व्यथित होता है और न नष्ट हो सकता है।"[5] यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आत्मा ब्रह्म से भिन्न न होकर ब्रह्म ही है।

नकारात्मक शैली के अंतर्गत ही बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म को अक्षर, अस्थूल, अनणु, अह्रस्व, अदीर्घ, अस्नेह, अच्छाय, अतम अवायु, अनाकाश असंग, अरस, अगंध, अचक्षु, अश्रोत्र, अवाक्, अमन, अतेजस्क, अप्राण, अमुख, अमात्र, अनंत और अब्राह्य कहा गया है।[6] बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म का वर्णन सत् एवं असत् दोनों रूपों में किया गया है।[7] ब्रह्म का चित् विशेषण उसकी ज्ञान एवं प्रकाशमयता का द्योतक है। ब्रह्म ज्ञान एवं प्रकाश रूप है। इसलिए बृहदारण्यक में ब्रह्म को 'ज्योतिषं ज्योति'[8] कहा गया है। एक स्थल पर परम तत्त्व को सत्, चित् एवं आनंद से पूर्ण कहा गया है।[9] याज्ञवल्क्यजी गार्गी को ब्रह्म का स्वरूप बतलाते हुए कहते हैं कि हे गार्गी, जिसमें सब ओत-प्रोत है, वह अविनाशी है, वह न स्थूल है, न सूक्ष्म है, न छोटा है, न बड़ा है, न वह लोहित है, न वह संसार जीव की तरह स्नेह वाला है। वह आवरण रहित, तम रहित, वायु रहित, स्वाद रहित, गन्ध रहित, नेत्र रहित, श्रोत्र रहित, वाणी रहित, मन रहित, प्राण रहित, मुख रहित, परिणाम रहित, अन्तर रहित तथा बाह्य रहित है।"[10] न वह खाता है और न कोई उसको खाता है।"[11] इस प्रकार उक्त विवेचन में ब्रह्म का देशातीत रूप स्पष्ट रूप में वर्णित हुआ है।

कठोपनिषद् में अक्षर को ही अपर ब्रह्म और पर ब्रह्म कहा गया है। इस अक्षर को ही जानकर जो जिसकी इच्छा करता है, वही उसका हो जाता है।[12] यदि उसका उपास्य 'पर ब्रह्म' हो तो वह केवल जाना जा सकता है और यदि 'अपर ब्रह्म' हो तो प्राप्त किया जा सकता है। बृहदारण्यकोपनिषद् में भी ब्रह्म को अक्षर"[13] कहना उसकी कार्य कारणावस्था का निषेध है। जो अक्षर है उसमें परिवर्तन संभव नहीं होता। उक्त विचार को ही स्पष्ट करते हुए याज्ञवल्क्य जनक से कहते हैं कि यह ब्रह्म अप्रमेय एवं ध्रुव है। यहाँ कार्य-कारणावस्था से अतीत ब्रह्म का वर्णन भी उपलब्ध होता है। यह उपनिषद् स्पष्ट रूप से कहती है कि ब्रह्म के अतिरिक्त कोई दूसरी सत्ता नहीं है।[14] इस उपनिषद् के अंतर्गत याज्ञवल्क्य ने आत्मा को ईश्वर का रूप दिया है और उन्होंने कहा है कि वह आत्मा ही सबका ईश्वर है। वही सब भूतों का अधिपति एवं पालक है। इसके अतिरिक्त उन्होंने आत्मा की तुलना सेतु से की है क्योंकि जगत् का रक्षक आत्मा ही सेतु की तरह सबको पार लगाने वाला है। वही लोकों की रक्षा के लिए उनको धारण करता है।[15] इस प्रकार यहाँ ब्रह्म एवं आत्मा के रक्षक का वर्णन भी स्पष्ट रूप से मिलता है। बृहदारण्यकोपनिषद् में एक स्थल पर गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए याज्ञवल्क्य कहते हैं कि वे पृथ्वी के अभ्यन्तर और बाहर, ऊपर और नीचे स्थित है, जिसको पृथ्वी नहीं जानती और जो पृथ्वी को जानता है, जिसका पृथ्वी शरीर है, जो पृथ्वी के बाहर व भीतर रहकर पृथ्वी का शासन करता है जो अविनाशी एवं निर्विकार है और जो तुम्हारा और सबका आत्मा है, वही हे गौतम, अन्तर्यामी है।"[16]

ब्रह्म ही इस सम्पूर्ण विश्व का कर्ता है। यह सर्व सिद्धांत है। इस जगत् में जो कुछ कर्म है वह सब कर्म उसीके आश्रित है, अतः वह सर्वकर्मा कहलाता है। जैसा कि 'वही सबका कर्ता है' श्रुति में कहा गया है।[17] बृहदारण्यकोपनिषद् में याज्ञवल्क्य गार्गी को बतलाते हैं कि हे गार्गी ! उसी ब्रह्म में यह आकाश ओत-प्रोत है। इस हेतु उपमा के अभाव के कारण आकाश से उपमा दी जाती है।"[18] ब्रह्म या आत्मा सेतु के समान सेतु है, क्योंकि वह सम्पूर्ण जगत् को धारण किए हुए हैं। दिन तथा रात्रि सम्पूर्ण उत्पत्ति से पदार्थों के परिच्छेदक होने पर भी इसका अतिक्रमण नहीं करते।"[19] बृहदारण्यकोपनिषद् में इसी तथ्य का समर्थन किया गया है : 'जिस परमात्मा के नीचे संवत्सर दिनों के रूप में परिवर्तित होता है।'[20]

परब्रह्म पूर्ण है और यह (जगत् भी) पूर्ण है। उस पूर्ण ब्रह्म से ही यह पूर्ण उत्पन्न होता है। इस पूर्ण के पूर्ण को निकाल लेने पर भी पूर्ण ही बचा रहता है। आकाश ब्रह्म ओमकार है। आकाश सनातन (परमात्मा) है। जिसमें वायु रहता है वह आकाश ही 'ख' है। इस तरह आकाश की ब्रह्म रूप में उपासना की गई है।[21] हृदय की ब्रह्म रूप से उपासना

की गई है। जो हृदय है, वह प्रजापति है। यह ब्रह्म है, यह सर्व है, यह हृदय तीन अक्षर वाला नाम है। [22] सत्य की ब्रह्म रूप से उपासना बृहदारण्यकोपनिषद् में मिलती है। वही वह हृदय-ब्रह्म ही वह था जो कि सत्य ही है। जो भी इस महत्, यक्ष (पूज्य), सर्वप्रथम उत्पन्न होने वाले को यह 'सत्य ब्रह्म है' ऐसा जानता है, वह ही लोकों को जीत लेता है। क्योंकि ब्रह्म सत्य ही है। इसी तरह से विद्युत की भी ब्रह्म रूप से उपासना की गई है।[23]

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म सम्बन्धी दार्शनिक सिद्धांत प्रतिपादित हुए हैं। जीव तथा ब्रह्म की एकता को 'इदम् सर्वं यदयमात्मा' (यह सब आत्मा ही है), 'अयमात्मा ब्रह्म' (यह आत्मा ही ब्रह्म है), 'अहं ब्रह्मास्मि' (मैं ब्रह्म हूँ) इत्यादि श्रुतियों के द्वारा विवेचित करते हुए दृष्टांत कथाओं में ब्रह्म का सगुण और निर्गुण स्वरूप का वर्णन किया गया है। जिसके अनुसार ब्रह्म ही एकमात्र सत्य है, सम्पूर्ण विविधता जो दृष्टिगोचर हो रही है, वह नाममात्र है। अज्ञानवश ही जीव, जगत् व ब्रह्म पृथक् प्रतीत होता है। ब्रह्म न तो पूजा की वस्तु है, न डरने की। वो तुम्हारा अपना स्वरूप है। "नेति नेति" से हर झूठी पहचान हटाओ, तो जो बचता है, वही "अहं ब्रह्मास्मि" है।

संदर्भ संकेत :

1. सर्वपल्ली, डॉ.राधाकृष्णन : उपनिषदों का संदेश, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, संस्करण सन् 2011ई., पृ.9
2. बृहदारण्यकोपनिषद्, 4.4.25
3. माण्डूक्योपनिषद्, 1.6
4. प्रश्नोपनिषद्, 5.2
5. बृहदारण्यकोपनिषद्, 2.3
6. वही, 4.5.15
7. वही, 2.3.1
8. वही, 4.4.16
9. वही, 2.4.12
10. वही, 3.8.8
11. वही, 4.4.15
12. कठोपनिषद्, 1.2.16
13. बृहदारण्यकोपनिषद्, 4.3.23
14. वही, 1.1.3
15. वही, 4.4.22
16. वही, 3.7.1
17. वही, 4.4.13
18. वही, 3.8.12
19. छान्दोग्योपनिषद्, 8.4.1
20. बृहदारण्यकोपनिषद्, 4.4.16
21. वही, 5.1.1
22. वही, 5.3.1
23. वही, 5.4.1 और 5.7.1